भगत रविदास – सबद ३२

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै ॥

रागु रामकली, भगत रविदास, गुरु ग्रंथ साहिब, ९७३

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै ॥
लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ॥१॥
देव संसै गाँठि न छूटै ॥
काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटे ॥१॥ रहाउ ॥
हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी ॥
गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥२॥
कहु रविदास सभै नही समझसि भूलि परे जैसे बउरे ॥
मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥१॥

सार: शैक्षणिक समझ और जीवन का अनुभव, जानने के दो अलग-अलग तरीके हैं। शैक्षणिक समझ विचारों को व्यवस्थित करती है और अवधारणाओं को परिभाषित करती है जिससे संरचित विश्लेषण के माध्यम से स्पष्टता मिलती है। इसके विपरीत, व्यक्तिगत जीवन-अनुभव, आंतरिक जुड़ाव से उपजता है इसे समझाया नहीं जा सकता बल्कि अनुभव किया जाता है। कोई व्यक्ति बिना सार को समझे बौद्धिक रूप से भी बहुत अच्छा हो सकता है। हालाँकि, जीवन का अनुभव धारणा, व्यवहार और संवेदनशीलता को एक ऐसे जुड़ाव में बदल देता है जो सिर्फ़ सिद्धांत नहीं कर सकता। जबकि शैक्षणिक समझ का ज्ञान खोज में मदद कर सकता है किंतु व्यक्तिगत रूपांतरण का आश्वासन नहीं देता। जब यह दोनों मिलते हैं तब ज्ञान सटीक भी होता है और जीवंत भी।

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै ॥
हमारे पास सर्वव्यापी सार के बारे में ज्ञान पढ़ने और सुनने की क्षमता हो सकती है लेकिन सहज अनुभव और प्रेमपूर्ण प्रतिध्वनि अक्सर प्रदर्शित नहीं होती। यह शैक्षणिक समझ और जीवित संबंध के बीच के अंतर को उजागर करता है।

लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ॥१॥
पारस पत्थर से छुए बिना लोहा सोना कैसे बन सकता है। यह बताता है कि अनुभवात्मक शिक्षा के बिना कोई प्रबुद्ध बोध की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता। (१)

देव संसै गाँठि न छूटै ॥
हे दिव्य ऊर्जा, संदेह की गांठ नहीं खुलती। यह संदेहवाद के कारण होने वाली पीड़ा को दर्शाता है जो स्पष्टता को रोक, गहरी जड़ें जमा चुके अनुबन्धनों से उपजी पीड़ा को दर्शाता है।

काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटे ॥१॥ रहाउ ॥
अनियंत्रित इच्छा, क्रोध, भ्रम, अभिमान और ईर्ष्या ने मिलकर हमें लूट लिया है। इन पांच इंद्रिय शक्तियों को चोरों के रूप में पहचाना जाता है जो मन को विचलित कर शांति छीन लेते हैं। (१)(विराम)

हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी ॥
'मैं एक महान कवि हूँ', 'मैं उच्च कुल का हूँ', 'मैं एक विद्वान हूँ', 'मैं एक योगी हूँ', 'मैं एक संन्यासी हूँ'। यह दावे इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि कैसे बढ़ा-चढ़ा अहं श्रेष्ठता साबित करने के लिए पहचान का उपयोग करता है।

गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥२॥
मैं ज्ञानी, गुणी, वीर और दाता हूँ, यह सोच कभी नहीं जाती। स्वयं को श्रेष्ठ समझने का यह नज़रिया कमज़ोरी दिखाता है जो विनम्रता के गुण को अनदेखा करता है। (२)

कहु रविदास सभै नही समझसि भूलि परे जैसे बउरे ॥
रविदास कहते हैं, कोई नहीं समझता, सब भ्रम में पड़े हैं जैसे पागल हों। यह इंसान की अज्ञानता को दर्शाता है, अहंकार के सूचक की भूलभुलैया में भटकते, सार्वभौमिक सच्चाई से अनजान हैं।

मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥१॥
मेरे लिए, सहारा सर्वव्यापी सच्चाई का ध्यान है। यह मेरा जीवन, प्राण और धन है। यह यात्रा अहं की सीमाओं से सार्वभौमिक चेतना के विशाल क्षेत्र की ओर बदलाव को दिखाती है। (३)(१)

तत्त्व: भक्त रविदास बताते हैं कि कैसे बढ़ा-चढ़ा अहं पहचान को ढाल की तरह इस्तेमाल करता है और सूचक को नियंत्रण का हथियार बनाता है। जाति, ओहदे, मान्यताओं या उपलब्धियों से बंधे रहकर, अहं ऊँच-नीच वाले ढाँचों के ज़रिए मान्यता चाहता है और अक्सर दूसरों को अनदेखा करता है। यह स्वार्थ सोच को सीमित कर देता है और लोगों के बीच कठोर दीवारें खड़ी कर देता है। अहं सच के बजाय अपनी छवि की रक्षा करता है जिससे दोहरापन पैदा होता है जो हमारे साँझा अस्तित्व की समझ में रुकावट डालता है। इन सीमाओं को पार करने और एकता को बढ़ावा देने के लिए विनम्रता और करुणा अपनाना बहुत आवश्यक है।

पहलकदमी

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com